(चाणक्य पाटलीपुत्र से निष्कासित होकर वनपथ पर)

चाणक्य– (स्वगत क्रोधाभिभूत हो) अपमान, घोर अपमान।

मैनें शास्त्रार्थ में विजय प्राप्त कर पाटलीपुत्र के पंडितो पर अपनी छाप अंकित कर दी। तदुपलक्ष्य में महाराज महापद्यमनंद ने मेरी विद्ववता पर मुग्ध हो दान विभाग का अध्यक्षपद प्रदान किया किन्तु उद्दण्ड युवराज धनानंद ने केवल मेरी कुरूपता और श्यामरंग को ही देखकर मेरा तिरस्कार किया। मै क्यों किसी के व्यंग बाण सहन करूँ। उस अभिमानी ने मेरे केशों को पकड़कर मुझे सेवकों से बाहर निकलवा दिया। पर याद रख धनानंद! जिस राज्यमद में तूने मेरा घोर तिरस्कार किया, उसी राज्य से हटाकर मैनें तेरे वंश को जड़मूल से न उखाड़ फेंका तो मेरा नाम चाणक्य नहीं। जिन केशों को तूने खोला है, वे केश तभी बँधेंगे, जब यह भीषण प्रतिज्ञा पूर्ण होगी। मुझे ऐसे पुरूष को खोजना होगा, जो राजा होने के उपयुक्त हो।

काश! मुझे राजपद मिलता परंतु भवितव्यता ऐसी नहीं थी। राजा बनना होता तो बुद्धि के साथ मेरा रंग रूप निखरता। नरेशों का सुंदर होना अनिवार्य है। उन्न्त ललाट, सौम्य मुखाकृति वाले राजा ही चिरकाल तक राज्य कर सकते हैं। उनकी निर्मल विचारधारा, आकर्षक व्यक्तित्व, सुंदरता प्रजा का मन लुभा लेती है। अपनी कल्पना को मूर्तरूप देने के लिए आज से मेरा अभियान प्रारंभ हो जाएगा। चाणक्य आज प्रतिज्ञा करता है कि जब तक योग्य पुरूष नहीं मिलेगा तब तक चैन से नहीं बैठूँगा।

दृश्य – प्रथम

(मयूर नगर के राजा देव सेन अर्थात् चंद्रगुप्त के नाना का घर)

(देव सेन चिंतित मुद्रा में विराजे हैं। चाणक्य साधु के रूप में भिक्षा हेतु उपस्थित होते हैं।)

चाणक्य– भिक्षाम देही ! द्वार पर साधु आया है माँ ! (सहसा देव सेन को देखकर)

राजन! उदास प्रतीत होते हैं।

देव सेन – (साधु की अभ्यर्थना हेतु खडे. होकर उव्वासन देते हुए।)

अतिथि देव का स्वागत हैं। गुरूदेव! कृपया विराज कर कुटिया को पवित्र करें।

चाणक्य – (बैठकर) क्या कष्ट है तुम्हें? साधु से बतलाने में कोई हानि नहीं है।

देवसेन – नहीं महाराज! आप से हानि कैसे हो सकती है? आप ठहरे रमता जोगी।

चाणक्य – भद्र हमें अपनी व्यथा बताएँ जिससे उसे मिटाने का भरसक प्रयास कर सकूँ।

देवसेन – आपका वात्सल्य देखकर हमें परम संतोष हुआ है गुरूदेव! बात यह है कि मेरी पुत्री गर्भवती है। उसे चंद्रमा पीने की तीव्र इच्छा है। दिनोंदिन वह कृशकाय होती जा रही है, इस इच्छा की पूर्ति नितांत असंभव है। पुत्री की प्राण रक्षा किस प्रकार हो? यह चिंता परिवार को आठों प्रहर सता रहीं है।

चाणक्य– (कुछ समय विचार मग्न हो पश्चात) वत्स! चिंता करने की आवश्यकता नहीं है। तुम निश्‍िचत रहो उसकी यह इच्छा पूर्ण होकर ही रहेगी। संसार में ऐसा कोई कार्य नहीं जो मनुष्य ना कर सके।

देवसेन – (हर्षित हो आश्चर्य पूर्वक) महाराज!

चाणक्य– किंतु एक शर्त है राजन्।

देवसेन – (नम्रता पूर्वक) कहिए गुरूदेव! हम आपकी क्या सेवा कर सकते हैं?

चाणक्य– शर्त कुछ कठिन और कठोर है! सोच समझकर वचन दो।

देवसेन– अतिथि की सेवा करना हमारा धर्म है महाराज! सोचना समझना कैसा?

चाणक्य – धन्य हो वत्स! तुम आर्य खंड के उज्जवल नक्षत्र हा। सुनो तुम्हें अपने पोते को हमें दे देना होगा।

देवसेन– (किंचित उदास हो) (परन्तु तुरंत ही आश्वस्त हा) तथास्तु महाराज! जन्मते ही शिशु आपको सौंप दिया जाएगा।

चाणक्य– वत्स! ऐसा नहीं। तुम लालन–पालन करना जब तक वह 8 वर्ष का ना हो जाए। तत्पश्चात् में ले जाऊँगा। उसका भविष्य सुनो। तुम्हें अत्यंत आनंद होगा। आज समग्र देश अनेक भागों में विभक्त है। संगठन ना होने के कारण हम शक्तिहीन हो रहे है। यदि विदेशी शत्रु का आक्रमण हुआ तो हमारा धर्म, हमारी संस्कृति सब नष्ट हो जाएगी। तुम्हारी रत्नावली के गर्भ में ऐसा ही रत्न छिपा है, जो भविष्य में महान सम्राट होगा और संपूर्ण देश को एक सूत्र में बाँधेगा।

दृश्य –दूसरा

(मध्य रात्रि, मयूर नगर का उद्यान)

(उद्यान में एक छोटा सा मंडप हैं। मंडप के ठीक बीचों–बीच दुग्ध से भरी एक काँसे की थाली रखी है। चाणक्य, देवसेन विराजमान है। आज्ञा पालन में सेवक भी तत्पर दिखाई देते है। निर्मल नीलाकाश में शरद पूर्णिमा का चाँद मुस्कुरा रहा हैं और वसुंधरा पर चारों ओर अपनी चाँदनी बिखेर रहा है।)

चाणक्य– सेवक ! काँसे की थाली अमृतमय शर्करा युक्त दूध से भर दो। अच्छा तो अब बुलाओ आयुष्मति पुत्री को। प्राचीन आचार्यो का कथन है कि शरद पूर्णिमा की रात्रि में चंद्रमा से अमृत झरता है। आज हम वही अमृत रत्नावली को पिलाएंगे ताकि समस्त देश का उद्धारक यशस्वी पुत्र रत्न उत्पन्न हो। (आदेश देते हैं) सेवक! जाओ देवी रत्नावली को ले आओ।

चाणक्य– (सेवक से) जिस समय देवी दुग्ध पान करें उस समय तुम्हें चुपचाप शनैःशनैः मंडप का उपरी खुला भाग इस प्रकार ढकना होगा जैसे थाली में दिखता हुआ चंद्र का प्रतिबिंब क्रमशः लुप्त हो जाए। और याद रहे यह रहस्य गुप्त रहे।

सेवक– ऐसा ही होगा महाराज! (जाता हे पुनः रत्नावली को लेकर प्रवेश)

चाणक्य – आओ देवी रत्नावली! बोलो तुम्हारी क्या अभिलाषा है? हम उसे तत्क्षण पूरा करेंगे।

रत्नावली– महाराज! बस एक ही कामना है, कि मैं इस संपूर्ण आकाश को चंद्रमा सहित पी जाऊँ।

चाणक्य – एवमस्तु! उठो, आओ हम आज मंत्रबल से तुम्हें चंद्रपान कराएंगे।

(देवसेन, चाणक्य, सेवक, सब मंडप के पास आते है।)

रत्नावली दूध पीने लगती है। ज्यों–ज्यों दूध कम होता जाता हैं, त्यों–त्यों सेवक मंडप को शाखा पत्रों से ढंकता जाता हैं। रत्नावली दुग्ध पीकर तृप्त होती है।

रत्नावली– आचार्य! आपके आशीर्वाद से आज मुझे बहुत काल के पश्चात तृप्ति मिली। हे गुरूदेव ! अब मैं पूर्णतः संतुष्ट हुई।

दृश्य–तृतीय

(बचपन में चंद्रगुप्त एक खेल खेलता था, जिसमें वह राजा बनता था और सारे बच्चे उसके दरबारी बनते थे। एक बार चाणक्य, जो बाद में उसके गुरू बने, ने उसे राजा का खेल खेलते हुए देखा। अब हम देखते हैं कि फिर क्या हुआ?

अब हम आपको ले चलते हैं, मयूर नगर के उद्यान में। यहां कई बालक खेल रहे हैं। दो बालक अंगरक्षक के रूप में चंद्रगुप्त राजा को पंखा डुला रहे हैं। दो–चार बालक अंगरक्षक बनकर हाथ में लाठी लिये हुए खड़े हैं। कुछ बालक पालथी मारकर बैठे हैं, ये सभासद बनकर सभा की शोभा बढ़ा रहे हैं। बीच में एक शिला है, जिस पर नरेश चंद्रगुप्त आसीन होंगें। पास में एक दूसरी शिला मंत्री जयदेव के लिए है। सभा प्रारंभ होती है। नरेश चंद्रगुप्त का दरबार में प्रवेश।)

सैनिक–(उँचे स्वर में)–सावधान! राज–राजेश्वर प्रतापी सम्राट चंद्रगुप्त पधार रहे हैं।

(पूरी सभा खड़ी हो जाती है। चंद्रगुप्त का प्रवेश। सब अभिवादन करते हैं)

महाराज च्रंद्रगुप्त की जय! महाराज च्रंद्रगुप्त की जय!

चंद्रगुप्त (सिंहासन पर बैठकर)– सभासदों! अब हमारी सभा प्रारंभ हो रही है। सैनिकों न्याय के लिए पधारे नागरिकों को उपस्थित करो।

सैनिक– जो आज्ञा महाराज! (जाता है)

चंद्रगुप्त– उपस्थित सदस्यगण! आप लोग भी ध्यानपूर्वक सुनें। न्याय करने में आपकी राय ली जायेगी।

सभासद(एक साथ)– अवश्य महाराज!

(सैनिक का एक बालक के साथ प्रवेश)

बालक– राजन् मेरी माँ अस्वस्थ है। उनसे कृषि कार्य नहीं संभल रहा है। आप हमारे माता–पिता हैं। हमें फसल काटनी है। हमारे पास मजदूरी देने के लिए पैसे नहीं है।

चंद्रगुप्त–घबराओ नहीं नागरिक! जब तक तुम्हारी माँ पूर्णतः स्वस्थ नहीं हो जाती, तब तक तुम्हारे खेती के कार्य के लिए राज्य की ओर से कुछ कर्मचारी नियुक्त कर दिए जायेंगे। उनका वेतन राज्यकोष से दिया जायेगा।

बालक– धन्य हो महाराज! आपने मेरी इतनी बड़ी चिंता क्षणमात्र में ही दूर कर दी। मैं आपका आभारी हूँ। (जाता है)

(द्वितीय बालक का प्रवेश, बालक देवपाल बहुत रोष में है)

चंद्रगुप्त– कहें नागरिक! आप क्या चाहते हो?

देवपाल (क्रोध से)– राजन्! मेरी छोटी बहन को सुमित्र ने अपशब्द कहे हैं। आपके शासनकाल में स्त्री जाति का अपमानित होना घोर अनर्थ है।

जयदेव– शांत हो देवपाल, शांत हो। अपराधी को अवश्य दंड मिलेगा।

चंद्रगुप्त– क्या बात हुई देवपाल! सुमित्र तो तुम्हारा मित्र है।

देवपाल(क्रोध से)– मित्र था, अब नहीं है। कल शाम को मेरी बहन बालू के घरौंदे बना रही थी, सुमित्र ने उसमें लात मार दी, मेरी बहन रोने लगी तो सुमित्र हंस पड़ा, दोनों मे कहा–सुनी हो गई। इसी बीच सुमित्र ने दुरवचन कहे।

चंद्रगुप्त–सैनिक! सुमित्र को इसी समय उपस्थित करो।

सैनिक– जो आज्ञा महाराज!

चंद्रगुप्त (जयदेव से)– महामंत्रीवर! सुमित्र को क्या दंड दिया जाए?

जयदेव– महाराज! आप स्वयं समझदार हैं, यदि आज्ञा हो तो सभासदों की सलाह ले ली जाए।

पहला सभासद– महाराज! उसकी जीभ कटवा देना उचित है।

दूसरा सभासद– महाराज! इसे मल्लों से घूसें लगवाना चाहिए।

तीसरा सभासद– उसके मुँह में मिर्च भरनी चाहिए।

चंद्रगुप्त– अवश्यमेव मंत्रीवर! नारी की मर्यादा का उल्लंघन करने वाले सुमित्र को उपस्थित किया जाए।

(सैनिक का सुमित्र को लिए हुए प्रवेश)

सुमित्र(डरते हुए)–महाराज!

चंद्रगुप्त– तुमनें नारी मर्यादा का उल्लंघन कर अनैतिक कार्य किया है। तुम कठोर दंड भुगतने के लिए तैयार हो जाओ।

सुमित्र (साहस से)– राजन्! मुझे दंड सहर्ष स्वीकार है, किंतु अपराध की क्षमा भी चाहता हूँ और आपको वचन देता हूँ कि भविष्य में पुनः ऐसी भूल नहीं करूँगा।

चंद्रगुप्त– मैं कैसे तुम्हारे वचनों पर विश्वास करूँ।

सुमित्र– राजन्! मनुष्य दुनिया की आँखों में धूल झोंक सकता है, किंतु अपनी में नहीं।

चंद्रगुप्त– सुमित्र तुमने अपराध स्वीकार करके महानता का परिचय किया है। हम तुम्हे क्षमा करते हैं।

चाणक्य(छिपकर देखते हैं) (मन में)– कितना सुंदर प्रतिभशाली बालक है, बिल्कुल राजाओं जैसा अभिनय कर रहा है। भव्य ललाट, विशाल वक्षस्थल, मजबूत बाहें,,,,,,,

सभी लक्षण चक्रवर्ती सम्राट के जैसे प्रतीत होते हैं।

(सुमित्र चला जाता है, और तभी चाणक्य का प्रवेश होता है)

चाणक्य– राजन् मेरी भी आपसे प्रार्थना है।

चंद्रगुप्त– निःसंकोच कहें। आप कौन हैं एवं यहाँ क्यों आए हैं।

चाणक्य– राजन् मैं ब्राम्हण हूँ। मेरे पास गाय नहीं हैं, अतः मैं गौरस से वंचित हूँ, कृप्या मुझे एक गाय प्रदान करें।

चंद्रगुप्त(उदारतापूर्वक)– विप्रवर! सामने गायें चर रही हैं, अपनी इच्छानुसार चुन लीजिए।

चाणक्य(कृत्रिम डरते हुए)– नहीं राजन्! ये गाये हम कैसे ले सकते हैं? इनका स्वामी रोकेगा तो?

चंद्रगुप्त–डरो मत ब्राम्हण, किसमें साहस है जो चंद्रगुप्त की आज्ञा की अवहेलना कर सके।

चाणक्य (मुस्कुराकर)– ओह! चंद्रगुप्त! आप यहाँ के राजा हैं। माफ करें राजन् मैं भूल गया था।

चंद्रगुप्त– कोई बात नहीं! आप तो मेरे गुरू समान हैं। हमलोग अभी राजसभा का अभिनय कर रहे थे। अब आप मेरे निवास स्थान को चलें और मेरा आतिथ्य स्वीकार करें।

चाणक्य– बालक! तुमने मुझे गुरू कहा है, क्या हमारे साथ चलकर विद्या अध्ययन करोगे? हम तुम्हे पूर्ण शिक्षित बना देंगे।

चंद्रगुप्त(हर्ष से)– मुझे पढ़ने की बहुत इच्छा है गुरूदेव! मैं आपके साथ अवश्य चलूँगा।

चाणक्य– कहीं तुम्हारे माता–पिता नें नहीं जाने दिया तो?

चंद्रगुप्त– यह असंभव है।

चाणक्य– तुम्हे विश्वास है बेटा कि तुम्हारे माता–पिता तुम्हे अनुमति दे देंगे?

चंद्रगुप्त– नहीं देंगे तो मैं उन्हें मना लूँगा।

(इस प्रकार चंद्रगुप्त चाणक्य की शिष्यता स्वीकार करते हैं और उनके साथ विद्या अध्ययन के लिए जाते हैं। शिक्षा के साथ अस्त्र–शस्त्र की विद्या, राजनीति, रणनीति आदि सभी नीतियों में वे पारंगत हो जाते हैं।)

सिकंदर की स्पीच

हा हा हा मैने विश्व के अनेक देशों पर विजय प्राप्त कर ली है। ईरान, अफगानिस्तान, तुर्की, काबुल आदि अनेक देशों को जीत लिया है। अब मैं यूनान से भारत विजय अभियान के लिए कूच करूँगा। मुझे विश्व विजेता बनने से कोई नहीं रोक सकता है। लेकिन...........कहीं चंद्रगुप्त मेरे विजय के रास्ते में रोड़ा बनकर खड़ा ना हो जाए। कहीं मेरा विश्व विजेता बनने का सपना अधूरा ना रह जाए। नहीं....नहीं ये नहीं हो सकता है। सैल्यूकस जैसे महान सेनाध्यक्ष, इतने ताकतवर मित्रों और इतनी विशाल सेना के होते हुए भला मेरी कैसे पराजय हो सकती है। अरे! मैं इतना वीर होते हुए भी कायरों की भाँति क्यों सोच रहा हूँ। चंद्रगुप्त को हराना तो मेरे लिए बाँए हाथ का खेल है।

दृश्य चतुर्थ

(चंद्रगुप्त अपने गुरू चाणक्य के प्रति पूर्ण समर्पित था। उनके कुशल मार्गदर्शन में चंद्रगुप्त ने अनेक राज्यों पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था, किंतु रणनीति के अभाव के कारण वे मगध के राजा से युद्ध हार गए। उसके पश्चात् वे आचार्य चाणक्य के साथ मगध के सैनिकों से बचने के लिए ग्रामीण वेश में भाग रहे थे। तभी दौड़ते हुए वे एक तालाब के किनारे पहुँचते हैं। वहाँ घाट पर धोबी कपड़े धो रहा है और घोड़े दौड़ने की आवाजें आ रही है।)

चाणक्य (धोबी से)– क्यों बंधु! तुम्हे अपना जीवन प्यारा नहीं है क्या? अपने परिवार से मतलब नहीं है क्या? जो यहाँ कपड़े धो रहे हो?

धोबी–महानुभाव! मैं आपकी बात समझा नहीं?

चाणक्य– अरे भाई! तुम्हें घोड़े दौड़ने की आवाजें सुनाई नहीं दे रही है। तुम्हे पता नहीं है कि राजा ने इस तालाब पर कपड़े धोने पर पाबंदी लगा दी है। शीघ्र भाग जाओ, नहीं तो ंअपने प्राणों से हाथ धोना पड़ेगा।

धोबी– मुझे तो ज्ञात नहीं था! आपने मुझे बता कर मुझ पर बड़ा उपकार किया है। हाय....मैं अपने कपड़े कैसे समेटूँ। हाय रे मैं मर जाऊँगा।

चाणक्य– शीघ्रता करो भाई! भागो! हम तुम्हारे वस्त्रों की रक्षा करेंगे। जब अश्वारोही चले जाएँगे, तो इन कपड़ों को आकर ले लेना।

धोबी– (भागते हुए) हाँ महानुभाव! मेरे कपड़ों की रक्षा करना।

चाणक्य– बेटा चंद्रगुप्त! जल्दी करो तालाब में जो कमल का झुंड दिख रहा है वहीं पत्तों के नीचे छिप जाओ। हम कपड़े धोते हैं।

(चाणक्य ऊपर का वस्त्र उतारकर नीचे की धोती खोंसकर घुटने तक ऊँचा कर लेते हैं, और कपड़े धोने का अभिनय करते हैं।)

(अश्वारोही का प्रवेश)

अश्वारोही (कठोर स्वर में)– ऐ धोबी!

चाणक्य (हाथ जोड़कर)– आज्ञा श्रीमान्!

अश्वारोही – किसी जवान को यहाँ से जाते हुए देखा है?

चाणक्य– हाँ, यही होगा कोई 20–22 वर्ष का।

अश्वारोही– हाँ, हाँ, निकला है क्या?

चाणक्य –हाँ, गोरा–गोरा सुंदर सा जवान।

अश्वारोही– किस ओर गया है? जल्दी बताओ नहीं तो पकड़ना कठिन हो जाएगा।

चाणक्य– (मुस्कुराते हुए) – अरे नहीं जी! ऐसा नहीं होगा? मैं बराबर पकड़वा दूँगा। (जल की ओर इशारा करके) यहीं छिपा हुआ है, कुछ जरूरी कार्य है क्या?

अश्वारोही – धोबी! वह राजा का अपराधी है। छल करके भाग आया है।

चाणक्य– तो फिर देर क्यों? पकड़ लो झटपट।

अश्वारोही– अरे मेरे कपड़े भीग जायेंगे। तुम पकड़ लाओ उसे, हम तुम्हे इनाम देंगे।

चाणक्य– नहीं श्रीमान् मुझसे नहीं होगा। हम वृद्ध और वह मोटा ताजा जवान। कपड़ें उतार कर घाट पर रख दो और कूद पड़ो। अरे हाँ। जिसका बंदर वही नचावे। हमने बता दिया, यही क्या कम है?

(अश्वारोही अस्त्र–शस्त्र सब एक ओर रखकर कपड़े उतारता है। जैसे ही वह वस्त्र रखने झुकता है, कि चाणक्य उसी की तलवार से उस पर प्रहार करता है। अश्वारोही चीख के साथ गिर जाता है और उसी समय उसकी मृत्यु हो जाती है।)

(चंद्रगुप्त तुरन्त सरोवर के बाहर निकलता है।)

चंद्रगुप्त– ओह! इसकी मृत्यु हो गई?

चाणक्य– हाँ बेटा ! हमारे रास्ते के काँटे निकल गए। अब जल्दी से इसी घोड़े से हमें निकल चलना चाहिए, वरना कोई दूसरी विपत्ति खड़ी हो जाएगी।

चंद्रगुप्त – आचार्य श्री ! तलवार भी लेते है।

चाणक्य– हाँ हाँ समय पर काम आ सकती है।

(पर्दा गिरता है।)

(चलते–चलते) क्यों बेटा! जब मैने तुम्हारे छिपने के बारे में अश्वारोही को बताया, तो तुम्हारे मन में उस समय कैसी प्रतिक्रिया हुई?

चंद्रगुप्त– (हँसकर) – यही कि गुरूदेव के प्रत्येक कार्य में सदैव कुछ न कुछ रहस्य विघमान रहता है। इसमें भी मेरा कोई हित होगा, ऐसा अटूट विश्वास था।

चाणक्य – क्या तुम्हारे मन में मेरे प्रति शंका उत्पन्न नहीं हुई?

(भजन........गुरूसमान दाता न कोई)

चंद्रगुप्त – गुरू के प्रति शंका? असंभव है गुरूदेव सर्वथा असम्भव है, अपने शुभ चिंतको के प्रति शंका करना जघन्य अपराध है गुरूवर!

चाणक्य – अद्वितीय गुरूभक्ति है वत्स! तुम्हारी इतनी भक्ति देखकर मुझे महान् आश्चर्य होता है। तुम कार्य के प्रति सतत्लगनशील एवं जागरूक हो । कोई भी शक्ति तुमसे सफलता नहीं छीन सकती है।

चंद्रगुप्त– आप जैसे आचार्य को पाकर मैं घन्य हो गया गुरूवर! आपके अगणित शुभाशीर्वाद मेरी कवच की भाँति रक्षा कर रहे है।

(चाणक्य और चंद्रगुप्त भागते–भागते एक ग्राम में एक कुटिया के पास पहुँचते हैं। शाम का समय है। गृहस्थ का भोजन का समय हो गया है उसी समय एक वृद्धा भोजन के अवसर पर किसी अतिथि की खोज में बाहर आती है।)

वृद्धा– सौभाग्य है अतिथिगण! चलें सांध्यबेला का भोजन ग्रहण कर हमें अनुग्रहित करें।

चाणक्य– क्षमा करें माँ! हम बटोही हैं। संध्या हो रही है, हमें दूर जाना है। भोजन करने से अनावश्यक विलंब होने की संभावना है।

वृद्धा– इसमें हानि ही क्या है? रात्रि यहीं व्यतीत करें और हमें आपको भोजन कराकर पुण्य संचय कर लेने दें।

चंद्रगुप्त– हम अनजान पथिक हैं माता!

वृद्धा– तब भी हमें कोई आपत्ति नहीं है।

चाणक्य– धन्य हो माता! धन्य हो! चलो वत्स! माता का आतिथ्य अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

(सब कुटिया में पहुँचते हैं, वृद्धा सबको आसन देती है और थालियों में खीर परोसती है।)

वृद्धा– भोजन प्रारंभ करें सब।

पौत्र–(हाथ हिलाकर चिल्लाता है) दादी माँ! मैं जल गया खीर से, आपने कैसी खीर बनाई है?

वृद्धा– पगला! खीर तो अच्छी बनी है तू तो अपनी अज्ञानता के कारण जल गया। चाणक्य जैसी अज्ञानता के कारण व्यर्थ ही हाथ जला लिया।

(चाणक्य और चन्द्रगुप्त एक–दूसरे का मुख देखते है।)

चाणक्य–मातुश्री ! भला इस अद्‌भुत उपमा का क्या प्रयोजन?

वृद्धा – आपको ज्ञात नहीं अतिथि! चाणक्य ने बिना रणनीति के अतुल बलशाली मगध नरेश की राजधानी पर सीधा आक्रमण कर दिया ।

चाणक्य– चाणक्य ने सोचा होगा कि मगध नरेश महापद्मनन्द वृद्ध हो गए है, पुत्र विलासप्रिय है, अतः राजधानी पाटलीपुत्र पर आक्रमण करने से विशाल सिंहासन सरलता से प्राप्त हो जायेगा।

वृद्वा – इतने विशाल राज्य को हासिल करने के लिये पहले वह पर्याप्त सैन्यबल एकत्रित करता, तत्पश्चात् सीमावर्ती लघु राज्यों को जीतता । फिर मगध को चुनौति देता।

चंद्रगुप्त – आपकी राय उचित है मातुश्री ! यदि मेरी कभी आचार्य चाणक्य से भेंट हुई तो अवश्य आपकी वाणी उनतक पहुँचा दूँगा।

चाणक्य– दोषों को स्वीकार कर उन्हें न दोहराना ही सबसे बड़ा प्रायश्चित है ।

(इस घटना के पश्चात् चंद्रगुप्त व चाणक्य ने मगध के पास के क्षेत्रों के राजाओं को रणनीति से अपने राज्य में विलय कराया और फिर मगध पर सामूहिक आक्रमण करके राजा महापद्मनंद को परास्त कर दिया। मगध पर विजय के पश्चात् चंद्रगुप्त का विवाह महापद्मनंद की पुत्री सुप्रभा से हो गया तथा राजा महापद्मनंद ने दीक्षा ले ली। इस प्रकार चंद्रगुप्त मगध के राजा बने और गुरू चाणक्य उनके मंत्री बने। चाणक्य के कुशल नेतृत्व में चंद्रगुप्त धीरे–धीरे संपूर्ण भारत को जीतकर भारत के महान सम्राट बन गए। मगध सम्राट बनने के पूर्व ही चंद्रगुप्त ने भारत पर आक्रमण करने वाले यूनान के राजा सिकंदर की सेना को भी परास्त कर दिया। चंद्रगुप्त की सेना ने सिकंदर के ताकतवर मित्रों को मार गिराया और सिकंदर को यूनान वापिस जाने पर मजबूर कर किया। यूनान जाते समय रास्ते में ही सिकंदर की मृत्यु हो गई।)

दृश्य–पंचम

हैलन सैल्यूकस का यूनान में संवाद

(सिकंदर की मृत्यु के पश्चात सिकन्दर के सेनापति सैल्यूकस सिकन्दर का भारत विजय का स्वप्न पूरा करने के लिए यूनान से भारत के आने की तैयारी करते हैं। सैल्यूकस की पुत्री हैलन श्रृंगार में व्यस्त है, उसकी वेशभूषा भारतीय है।)

सैल्यूकस– बेटी हैलन! आज मैं अत्यंत प्रसन्न हूँ , सुनोगी तो तुम भी प्रसन्न हो जाओगी। हम सब यात्रा पर चल रहे हैं।

हैलन– पिताजी! कहाँ चल रहे हैं हम?

सैल्यूकस– अरे! वहीं पगली! भारत।

हैलन – (पुलकित हा) भारत! मेरे सुख स्वप्नों का देश!

''जहाँ ज्ञान मंदाकिनी बहती। जन–जन को संबोधन करती।

ईर्ष्या–द्वेष–कलह को तज दो। धारण करो सीख यह महती।।

उस धरती से कभी न बिछड़ूँ, यह वर दो देवेश।

अहा! वह कैसा रम्य प्रदेश।।''

जी चाहता है अभी उड़कर वहीं पहुँच जाऊँ।

सैल्यूकस – बस प्रातः सूर्योदय होते ही हम सेना सहित कूचकर देंगे।

हैलन – सेना सहित!! कहीं आपका प्रयोजन युद्ध से तो नहीं।

सैल्यूकस – हाँ राजा का तो प्रयोजन ही राज्य विस्तार होता है

और वह युद्ध से ही प्राप्त होता है।

हैलन– युद्ध! युद्ध! युद्ध! युद्ध से कितने दीपक बुझ जाएँगे, कितने वृद्धों की लाठी टूट जाएगी, कितनों माँगों के सिंदूर धुल जाएँगे। क्या इसी से आपकी आत्मा को शांति मिलेगी, संतोष मिलेगा? क्या आप मनुष्यों के शवों पर गौरव की ईंट रखकर यश का कलुषित भवन का निर्माण करेंगे ।

सैल्यूकस – (क्रोध में) बस, बस हैलन! देख रहा हूँ तुम दिन पर दिन निरंकुश होती जा रही हो।

हैलन– सच बात कहना भी क्या अपराध की श्रेणी में आता है? आपको याद होगा पिताजी ! जब सम्राट सिकन्दर से तक्षशिला में एक साधु ने पूछा कि भारत विजय के बाद तुम्हारा क्या कार्यक्रम है ?

सैल्यूकस – तब सम्राट ने लम्बी सूची प्रस्तुत कर दी थी।

मुनिराज– तृष्णा रूपी गड्ढा इतना बड़ा है कि इसमें तीन लोक की सामग्री भी भर दी जाए, तो भी यह नहीं भर पाएगा। यदि तुम्हें सुख शांति चाहिए, तो संतोष रूपी अमृत का पान करना पड़ेगा।

(भजन)............

सिकन्दर और दो सैनिक, सैल्यूकस, हैलन (Spotlight) – अरे मैंने अपना सारा जीवन साम्राज्य के विस्तार में ही लगा दिया।

लेकिन मेरे साथ तो कुछ भी नही जाना है। सैनिको सुनों ! जब मेरी अर्थी निकले तो मेरे खाली हाथ बाहर निकाल देना तथा मेरी सारी संपत्ति श्मशान तक ले जाना, जिससे दुनिया जान सके कि सिकंदर की घोर अनीति से एकत्रित की गई संपत्ति भी अंतिम समय साथ न दे सकी। बालक आता है तो मुट्ठी बाँधकर पर उसे विवश हो खाली हाथ जाना पड़ता है।

दृश्य–छटवाँ

(युद्धस्थल में चंद्रगुप्त का शिविर)

(चंद्रगुप्त के भारत विजय के पश्चात्)

(सम्राट चन्द्रगुप्त, आचार्य चाणक्य, सेनाध्यक्ष, जयदेव आसंदियों पर बैठे वार्तालाप कर रहे हैं।)

चंद्रगुप्त–सैल्यूकस ने एक दिन के युद्ध में ही पराजय स्वीकार कर ली।

भद्रशाल– न जाने कितने आकांक्षाओं को लेकर वह पुनः भारत विजय पर आया था। आज उसका विजय अभियान विफल हो गया, समस्त आकांक्षाएँ, आशायें धूल में लोट रही होंगी।

जयदेव– उसे ऐसा भी दुरदिन देखना पड़ेगा, यह उसकी कल्पना से परे था।

चंद्रगुप्त– सचमुच **'नाइकेटर'** सैल्यूकस का हृदय बहुत व्यथित होगा।

जयदेव– ये '**नाइकेटर**' कौन बला है?

भद्रशाल–'नाइकेटर' यूनान में विजेता को कहते हैं।

जयदेव– (उपहास करते हुए)ओह! तो ये बिना विजय के ही विजेता बन गए, अपने सम्राट सिकंदर से भी कई कदम आगे।

चाणक्य– **अभिमान का मस्तक सदैव नीचा होता है** वत्स! अकड़, बेंत के वृक्ष की भाँति जरा से हवा के झोंके से चरमराकर टूट जाती है। भद्रशाल! सैल्यूकस कब तक आ पाएंगे?

भद्रशाल– आर्य! उन्होंने इसी समय आने का संदेश दिया था, आते ही होंगे।

चंद्रगुप्त– आचार्यश्री! एवं मंत्रीश्वर! सन्धि का प्रस्ताव यद्यपि पराजित सैल्यूकस की ओर से आया है, तथापि हमारी संस्कृति के अनुसार हमें पूर्णतः संयमित, संतुलित ढंग से मधुरवाणी में चर्चा करना होगी।

जयदेव– **प्रभुता, ऐश्वर्य, बल, बुद्धि के साथ विवेक व्यक्ति को पारस बना देता है।** आचार्य! हमारे सम्राट इन गुणों से परिपूर्ण हैं।

चंद्रगुप्त– पूर्ण कहाँ महामात्य! मैं तो उस पूर्णता की राह पर जाने का इच्छुक हूँ।

(भजन................

(सैल्यूकस का अपने एक साथी के साथ प्रवेश! सब खड़े हो जाते हैं, सैल्यूकस लज्जित होते हैं।)

चंद्रगुप्त– (विन्रमता से)स्वागत है यूनानी वीरों! हमें आपसे मिलकर हार्दिक प्रसन्नता है।

(सब हाथ जोड़कर अभिवादन करते हैं।)

सैल्यूकस– विजेता सम्राट चंद्रगुप्त! हमें आपके विनम्र व्यवहार पर घोर आश्चर्य हो रहा है, हम अपनी भूल पर लज्जावंत हैं।

चंद्रगुप्त– आसन ग्रहण करें महानुभाव! (सब बैठ जाते हैं।) आप लज्जावंत न हों। अतीत के क्षणों को भयानक स्वप्न की तरह भुला दें।

सैल्यूकस– सम्राट! आपकी बातें अलौकिक है। सेवा में एक निवेदन है मुझे पूर्ण विश्वास है आप उसे स्वीकार कर उदारता का परिचय देंगे।

चंद्रगुप्त– अवश्य महानुभाव! कहें।

सैल्युकस– मैं चाहता हूँ सम्राट! कि यह संधि इतिहास के पृष्ठों पर स्वर्ण अक्षरों में अंकित हो। इसलिए मेरी कन्या हैलन जो पूर्णरूपेण भारतीय है, स्वभाव से दयालु है। आप उसे पत्नी रूप में अंगीकार करें।

चाणक्य – इसमें एक कठिनाई है, तुम्हारी कन्या की अभिलाषा भी जानना जरूरी है।

सैल्युकस – सैनिक! जाओ बेटी हैलन को ले आओ।

(चंद्रगुप्त से)संधि में एक रहस्य है सम्राट! यदि कल शांति पुजारिन प्रिय हैलन ने श्वेत ध्वजा न फहराई होती तो हम सब एक साथ मिलकर शांति से बैठे दिखाई नहीं पड़ते।

चंद्रगुप्त– (आश्चर्य से) अच्छा तो श्वेत ध्वजा हैलन ने फहराई थी।

(भारतीय वेश में हैलन का प्रवेश, सबको अभिवादन करती है।)

चाणक्य– अब तो युद्ध ही समाप्त हो गया है हैलन। हम देख रहे हैं हैलन तुम वेशभूषा, भाषा सभी ओर से भारतीय रंग में रंग गई हो। क्या तुम्हारी श्रद्धा और शांति अहिंसा के सिद्धान्तों पर आधारित है।

हैलन– हाँ आचार्य देव! हमारे सम्राट सिकन्दर की प्रार्थना पर दिगम्बर साधु कल्याण जी मुनि हमारे देश गए थे। उन्होने मुझे जैन धर्म के प्रवर्तक महावीर स्वामी के महान् सिद्धान्त अहिंसा परमो धर्मः , जियो और जीने दो आदि के विषय में बतताया ।

चाणक्य– अच्छा! तो तुमने जैनदर्शन का रूचि पूर्वक अध्ययन किया है।

हैलन – मैंने उन दिगम्बर साधु के उपदेश से मद्य, माँस, मधु का त्याग, तथा 5 पापों का आंशिक रूप से त्याग किया है। मैं तो चाहती हूँ कि ऐसे साधु–संतों की भूमि भारत में ही मेरा निवास हो। काश! मैं यहीं जन्म लेती।

सैल्युकस– आचार्य! अब तो आप मेरी पुत्री की अभिलाषा से आश्वस्त हो गए होंगे।

चाणक्य – सैल्यूकस! अब तुम हमारे समधी हो गए, चन्द्रगुप्त पर मेरा बालकवत् स्नेह है।

(विवाह की शहनाई वाली धुन.........................)

दृश्य– सातवाँ

(सम्राट चंद्रगुप्त अपनी दोनों रानियों सुप्रभा, हैलन, पुत्र बिंदुसार, अभिन्न सखा जयदेव तथा सेनाध्यक्ष भद्रशाल सहित जिनेन्द्र भगवान के दर्शन करने जाते हैं।)

जिनेन्द्र भगवान के सम्मुख

(भजन.....

मंदिर से निकलते समय

चंद्रगुप्त–सैनिकों! नगर में घोषणा करवा दो कि महाराज आज किमिच्छिक दान देंगे।

दृश्य–आठवाँ

(ढम.....ढम.....ढम.....सभी जन सावधान होकर सुनें। आज सम्राट चंद्रगुप्त अपने कर कमलों से किमिच्छिक दान देंगे। सभी राज महल के उद्यान में   शीघ्रता से एकत्रित हों।........... ढम.....ढम.....ढम)

सैनिक– सावधान! राजराजेश्वर, अतुल बलशाली, मौर्यतिलक सम्राट चंद्रगुप्त पधार रहे हैं।

(सम्मान में सब खड़े हो जाते हैं।)

महाराज चंद्रगुप्त की जय!

(चंद्रगुप्त सबको बैठने का इशारा करते हैं।)

जयदेव– आप सभी को ज्ञात है कि कल से दशलक्षण पर्व प्रारंभ हो रहे हैं अतः महाराज की आज्ञा के अनुसार राज्य में सब प्रकार की हिंसा प्रतिबंधित है। कारागार से साधारण अपराधियों को तथा जिनके आचरण प्रशंसनीय है, ऐसे विशेष अपराधियों को बंधनमुक्त कर दिया जाए।

भद्रशाल–सभी जन मानस सुनों! आज सम्राट अपने कर कमलों से किमिच्छिक दान देंगे।

सम्राट चंद्रगुप्त की जय........ एक महिला दान लेने आती है।

चंद्रगुप्त– यह अन्न लो।

नारी– अन्न नहीं चाहिए।

चंद्रगुप्त– स्वर्ण मुद्राएँ ग्रहण करो।

नारी– नहीं चाहिए।

चंद्रगुप्त– तब फिर क्या चाहिए देवी!

नारी– क्या मेरी इच्छा पूरी होगी?

चंद्रगुप्त– यदि वह धर्मसंगत एवं मानव से संभव हो, तो वह अवश्य पूर्ण होगी।

नारी– मैं एकदम अकेली हूँ, मेरा अपना कहने वाला कोई नहीं है। मैं अपको अपने भाई के रूप में देखना चाहती हूँ।

चंद्रगुप्त– मुझे कोई आपत्ति नहीं, पर इस मिथ्या कल्पना से क्या होगा देवी। विश्व का प्रत्येक प्राणी अकेला है।

नारी– मुझे ये सब उपदेश नहीं सुनना। मै योगी नहीं हूँ। यदि आपको स्वीकार हो, तो मैं यह रक्षासूत्र आपके कर–कमलों में बाँध दूँ।

चंद्रगुप्त– लो रक्षासूत्र बाँधों बहन।

(एक अत्यंत दरिद्र व्यक्ति आता है।)

चंद्रगुप्त– (बहुत स्नेह से)– तुम्हे क्या दें बंधु!

दरिद्र व्यक्ति– बस मेरा यह पात्र भर दें, सम्राट!

जयदेव– आज तुम ऐसे दाता के सामने खड़े हो, जो तुम्हारी हर इच्छा को पूरी कर देगा। किमिच्छिक दान दिया जा रहा है, अवसर मत चूको। तुम्हारी जीवनभर की दरिद्रता दूर हो जाएगी।

याचक– ओह! जानता हूँ श्रीमान्! इसी के लिए तो मैं यहाँ आया हूँ। बस मेरा यह खाली पात्र भर दें।

(चंद्रगुप्त उसमें अंजुली भर–भर अन्न, स्वर्ण आदि डालते हैं, लेकिन पात्र खाली ही रहता है, भरता नहीं। वे आश्चर्यचकित हो जाते हैं।)

चंद्रगुप्त– तुम कौन हो बंधु?

याचक– सम्राट! मैं भी आप जैसा ही मनुष्य हूँ। अंतर इतना है कि आप धनवान हैं और मैं दरिद्र।

चंद्रगुप्त– हमारा पूछने का यह आशय नहीं था। मैं तो यह जानना चाह रहा था कि यह कैसा रहस्यात्मक पात्र है, जो इतनी चीजें डालने पर भी नहीं भर पा रहा है।

याचक– यह पात्र तो सभी के पास है सम्राट! यह पात्र मानव के हृदय का बना है। हृदय की अनंत जिज्ञासाएँ हैं। मैं बड़ी आशा लेकर आया था लेकिन मेरा इतना छोटा सा पात्र भी नहीं भर सका।

चंद्रगुप्त– सच कह रहे हो बंधु! तृष्णा की खाई को संतोष से ही भरा जा सकता है।

अब तक अगणित जड़ द्रव्यों से प्रभु भूख न मेरी..........

सुख, शांति, तृप्ति तो आत्मा के स्वभाव में है, नश्वर पदार्थों में नही।

याचक– मैं भी अब निराश नहीं, प्रसन्नता से भर गया हूँ सम्राट! यह दुराशा मिथ्या है, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण मुझे मिल गया है। इस पात्र को मैं अभी सबके सामने फेंक देता हूँ।(पात्र फेंक देता है।)

(यह घटना चंद्रगुप्त के हृदय को वैराग्य से भर देती है।)

(एक दूत आता है वह बहुत उदास दिख रहा है।)

चंद्रगुप्त– क्या बात है सैनिक चुप क्यों हो? कुछ बोलते क्यों नहीं?

दूत– सम्राट.....सम्राट.....आचार्य चाणक्य.....

चंद्रगुप्त–(बहुत व्याकुल होकर) क्या हुआ गुरूवर को?

दूत– सम्राट.....सम्राट.....

चंद्रगुप्त– तुम कुछ बोलते क्यों नहीं?

दूत– आचार्य चाणक्य अब इस दुनिया में नहीं रहे।

चंद्रगुप्त– ओह!!! अत्यंत शोकमग्न हो जाते हैं।

(सभी चले जाते हैं।)

दृश्य–नौवाँ

(सम्राट चंद्रगुप्त भद्रबाहु आचार्य के पास गए)

चंद्रगुप्त– नमोस्तु मुनिवर

मुनिराज– धर्मवृद्धि हो।

(भजन.................

मुनिराज–अरे! इतना छोटा बालक! ये तो बोल रहा है।(कुछ सोचते हुए)

राजन्! यहां बारह वर्ष का अकाल पड़ने वाला है, जिसमें धर्म व संयम की रक्षा नहीं हो पाएगी।

दृश्य–दसवाँ

सोलह स्वप्न

आचार्य भद्रबाहु के दर्शन के पश्चात् सम्राट चंद्रगुप्त अपने राजमहल में वापस आ जाते हैं। वे अत्यंत विरक्त दिखाई दे रहे हैं। तत्व का चिंतन करते–करते वे अपने शयनकक्ष में पहुँचते हैं और कुछ समय पश्चात् ही उन्हें निद्रा आ जाती है।

कक्ष में दीपक का मंद–मंद प्रकाश फैल रहा है। उन्हे भयानक स्वप्न दिखायी देते है, वे चौंककर जाग उठते है। मधुर वाद्य बज रहे हैं, लोग प्रभाती गा रहे है। सम्राट लेटे ही लेटे संगीत का आनन्द ले रहे है, मुख पर कभी–कभी चिन्ता की रेखाएँ स्पष्ट हो रही है।

(भजन................

चन्द्रगुप्त– लेटे ही लेटे उफ् कितने भयानक स्वप्न थे। लगता है जैसे महा अनिष्ट होने वाला है।

गुनगुनाते है। (भजन................

अहा! सचमुच आज रात बीत गई और जीवन का सुन्दर प्रभात हुआ है, अनादिकाल की गहरी निद्रा सहसा आज खुल गई है, पर ये दुःस्वप्न.... (विचारणीय मुद्रा में)

(सम्राज्ञी हैलन और सुप्रभा का प्रवेश)

हैलन– आर्यपुत्र! आज आप अस्वस्थ जान पड़ते है?

चन्द्रगुप्त– हाँ शुभे! तन नहीं मन अस्वस्थ जान पड़ रहा है।

सुप्रभा – मन अस्वस्थ है? अचानक क्या हो गया आपका?

चंद्रगुप्त – ऐसा लग रहा है, जैसे कुछ अनिष्ट होने वाला है। आज मैने अति विचित्र असुहावने 16 स्वप्न देखे है।

हैलन– उह! स्वप्न का क्या? वे तो आते ही रहते हैं।

चंद्रगुप्त – नहीं हेलन ! विशेष स्वप्न भविष्य के इष्ट–अनिष्ट की सूचना भी देते है।

सुप्रभा– स्वामी! क्या स्वप्न सत्य भी होते हैं?

चंद्रगुप्त – हाँ देवी ! उनके स्वप्न सत्य होते है, जो तन–मन से स्वस्थ होता है।

हैलन व सुप्रभा– हे स्वामी! आप हमें भी अपने दुःस्वप्न के बारे में बताइये।

1 कल्पवृक्ष की टूटती हुई शाखाएँ – पंचम काल में अंग मुनि द्वादशांग के ज्ञाता नहीं होंगे।

चंद्रगुप्त – अवश्य सुनो।

2 स्वप्न– घोर अंधकार के साथ सूर्यास्त का दिखना इसका फल – क्षत्रिय राजा जैनेश्वरी दीक्षा नहीं लेंगे।

3 अनेक छिद्र सहित चंद्रमा– जिन शासन में अनेक मतभेद हो जाएँगें।

4 अपवित्र स्थान में सुन्दर कमल का खिलना – ब्राम्हण एवं क्षत्रिय अन्य धर्म पालेंगे, वैश्य लोग जैनधर्म पालेंगे।

5 समुद्र की सीमा का उल्लंधन करते देखा – क्षत्रिय राजा अन्यायी होंगे।

6 12 फनों का सर्प – 12 वर्ष का भयंकर अकाल पड़ेगा।

7 देव विमान वापस लौटते देखा– पंचम काल में स्वर्ग से देव नहीं आएँगे।

8 उँट पर बैठा राजकुमार – राजा व मंत्री गण दया रहित होंगे।

9 दो काले हाथियों को लड़ते देखा – समय पर पानी नहीं बरसेगा।

10 सोने के पात्र में कुत्ते को खीर खाते देखा– लक्ष्मी हीन कुलवालों के पास रहेगी।

11 दो बछड़ो को रथ खींचते देखा – पंचम काल में जवानी में धर्म पालेंगे और वृद्धावस्था में शिथिल होंगे।

12 नग्न स्त्रियों को देखा – अरहंत प्रभु को छोड़कर कुदेवों को पूजेंगे।

13 जुगनु को चमकते देखा – जैनधर्म की प्रभावना जुगनु के उजाले के समान कभी–कभी चमकेगी, फिर अंधकार हो जाएगा।

14 हाथी पर बन्दर बैठा देखा – नीच लोग राज्य करेंगे और क्षत्रिय उनकी सेवा करेंगे।

15 धूल में रत्नों का ढेर देखा – धर्मात्माओं में परस्पर मतभेद होंगे, वे मिलजुल कर नहीं रहेंगे।

16 सूखे सरोवर में दक्षिण दिशा में थोड़ा सा जल देखा – जैन धर्म दक्षिण की तरफ होगा।

चंद्रगुप्त – जानती हो प्रिये ! मेरा शेष जीवन अशेष होने जा रहा हैं।

हैलन – (चंद्रगुप्त के मुख पर हाथ रखकर) अरे रे! आज कैसी अशुभ वाणी कह रहे है।

चंद्रगुप्त – यह अटल सत्य है प्रिये! शुभ–अशुभ बाह्रय में कुछ भी नहीं है, सब अंतर के भावों में ही निहित है। हमने यह निश्चय किया है कि अब आत्म कल्याण में लगना ही अभीष्ट है, अतः हम राज्य परित्याग कर रहे है।

सुप्रभा– स्वप्न को सत्य मानकर कोई निर्णय लेना उचित नहीं है।

चंद्रगुप्त – हे देवी! स्वप्न का निमित्त पाकर ही हम सावधान हो जाएँ, तो क्या बुरा? जीवन का क्या विश्वास? निकली साँस लौटती है या नही? अभी तक पुरूषार्थ की निर्बलता के कारण ही बुद्धि, विवेक को निरंतर छल रही थी। हम जाग कर भी निद्रित हो जाते थे, अब हमारा मंगल प्रभात हुआ है। अतः आत्मकल्याण में लग जाना ही श्रेष्ठ है।

(भजन................ पुदगल का क्या विश्वासा................

हैलन – तो सचमुच ही आप अपने निर्णय पर अडिग है।

चंद्रगुप्त – (मुस्कुराकर) कुछ संदेह है?

हैलन– (प्रसन्नता से) नही मुझे प्रसन्नता है। सम्राट ! आज

तक आप से मेरा दाम्पत्य संबंध था। किंतु अब मै भी आपके पथ की पथिक बनने की आज्ञा चाहती हूँ।

सुप्रभा– यह क्या भगिनी! पति भी चले और सुदूर देश से आकर, स्नेह की डोर में बाँधकर तुम भी चली।

हैलन– जीजी! तुम ये क्यों भूल रही हो, कि हम सब पक्षियों के रैन बसेरे की भाँति मिलते हैं और सुबह होते ही अपने–अपने गंतव्य मार्ग पर चल देते हैं।

बिंदुसार– छोटी माँ! आपने मुझे अपने हाथों से खिलाया है, मीठी लोरियाँ गा–गाकर सुनाया, आपने मुझे जन्मदात्री माँ से भी ज्यादा वात्सल्य दिया। अपने बालक को इस तरह छोड़कर आप नहीं जा सकती छोटी माँ।

हैलन– (अत्यंत स्नेह से बिंदुसार के सिर पर हाथ फेरते हुए), वत्स! जब बालक बड़ा हो जाता है तो उसे अपने माता–पिता के आश्रय की जरूरत नहीं रहती, अब तुम बड़े हो गए हो, मेरे लाल।

बिंदुसार– माता–पिता के सामने बालक वृद्ध होकर भी बालक ही रहता है एवं वह उनसे सर्वदा स्नेह की अपेक्षा रखता है।

चंद्रगुप्त– कुमार! यह तो सांसारिक परंपरा है। इसी प्रकार जन्म–जन्मांतरों से हम मिल–बिछुड़कर सुखी–दुखी होते रहते हैं। कुमार बिंदुसार! (अपने सिर से मुकुट उतारकर कुमार को पहनाते हुए) लो यह मुकुट संभालो, अपने कर्तव्य को कभी नहीं भूलना!

जयदेव– कुमार बिंदुसार के राज्याभिषेक का उत्सव मनाया जाए।

बिंदुसार– (सविनय हर्ष विषाद मिश्रित गदगद स्वर से)– पिताश्री, दोनों मातुश्री! मैं विश्वास दिलाता हूँ कि आपके द्वारा दिए राज्य का संचालन सुचारू रूप से करूँगा। आप निश्चिंत होकर आधि–व्याधि–उपाधि रहित आत्मा का आनंद भोगें।

(चंद्रगुप्त, सुप्रभा, हैलन को चरण स्पर्श करता है।)

चंद्रगुप्त– अभी तक मैंने अखंड भारत पर आधिपत्य स्थापित किया, किंतु अब मैं अखंड आत्मा पर आधिपत्य स्थापित करने की यात्रा प्रारंभ करने जा रहा हूँ। सिपाहियों समस्त जनसमुदाय को एकत्रित होने की घोषणा की जाए।

सिपाही– जो आज्ञा महाराज!

चंद्रगुप्त– हम समस्त जन समुदाय को आमंत्रित करते हैं।

जिन्हें सुखी होना है, वो मोह ममता को त्याग करके वीतराग की शरण में चलें। नगर के बाहर आचार्य श्री भद्रबाहु श्रुत केवली विराजमान हैं। मैं उनसे दिगम्बर दीक्षा ग्रहण कर मोक्षमार्ग पर बढ़ने का अभ्यास करूँगा।

(संत साधु बनके विचरू...........)

(प्रजाजन, जयदेव, चंद्रगुप्त के साथ चलते हैं।)

चंद्रगुप्त– अब अंतिम विदा! नगर सीमा आ गई, आप सब लौट जाए। हम चलते हैं।

(जयदेव भी चंद्रगुप्त के साथ हो लेते हैं।)

चंद्रगुप्त– (आश्चर्य से) तुम कहाँ जयदेव?

जयदेव–(मुस्कुराकर) जहाँ तुम मित्र! (सबसे हाथ जोड़कर विदा लेते है।)

चंद्रगुप्त– नमोस्तु आचार्यश्री! मुझे अब यह संसार असार लगने लगा है। कृप्या आप मुझे जैनेश्वरी दीक्षा प्रदान करें।

आचार्यश्री– हे राजन् आप सर्वप्रथम एक वर्ष तक अपने राज्य के साधारण कर्मचारी की तरह समय व्यतीत करें। स्वाध्याय, तत्वनिर्णय, ध्यान के द्वारा ज्ञाान और वैराग्य में वृद्धि करें। इसके पश्चात् ही आपको दिगम्बर दीक्षा प्रदान की जाएगी।

चंद्रगुप्त– ओह! आज मुझे मेरा सारा मान गलता हुआ दिखाई पड़ रहा है। अब मैं एक वर्ष तक अंतर की साधनापूर्वक दिगम्बरी दीक्षा की तैयारी करूँगा।

सम्राट चंद्रगुप्त एवं जयदेव आचार्य भद्रबाहु से दिगम्बरी दीक्षा लेकर आत्मसाधना करते हैं।

(आभूषण उतारते हुए।)

विषयों की तृष्णा को छोड़, संयम की साधना में चल पड़े सम्राट चंद्रगुप्त.......!